[५४]

जनु जु रजनि - बिछुरन रहे
पदुमिनि - आनन छाइ,
ओस - आँसु - कन सो करन
पोंछत रबि - पिय आइ।

पदुमिनि-आनन=कमलिनी-रूपिणी पद्मिनी नायिका के मुख पर। **ओस-आँसु**=ओस-रूपी अश्रु। **करन**=किरण-रूपी हाथों से। **रबि-पिय**=सूर्य-रूप पति।

[५५]

नियमित नर निज काज-हित
समय नियत करि लेय;
रजनी ही में गंध ज्यों
रजनी - गंधा देय।

नियमित नर=नियमानुकूल चलनेवाला, व्यवस्थित मनुष्य। **रजनी-गंधा**=वह बेलि, जिसके पुष्प रात्रि में ही सुगंध बिखेरते हैं।

[५६]

मानस - खस - टाटी सरस
हरि कलि - ग्रीसम - पीर—
त्रयतापन - लूअनि करति
त्रयबिध, सुखद समीर।

मानस=महाकवि तुलसी कृत रामचरित-मानस। **त्रयतापन**=दैहिक, दैविक एवं भौतिक-नामक तीन तापों की। **त्रयबिध, सुखद समीर**=शीतल, मंद और सुगंध समीर, जो तन, मन, प्राणों को सुखद है।

[५७]

सीत - घाम - लू - दुख सहत,
तऊ न तोरत तार;
झरत निरंतर झर - सरिस,
सोइ सनेह सुचि, सार।

तऊ=तो भी। **झर**=झरना। **सुचि**=पवित्र।

[५८]

उर-धरकनि-धुनि माहि सुनि
पिय - पग - प्रतिधुनि कान—
नस - नस ते नैंनन॰ उमहि
आए उतसुक प्रान।

उमहि आए=उमड़कर आए।

[५९]

सत - इसटिक जग - फील्ड लै
जीवन - हाकी खेलि;
वा अनंत के गोल में
आतम - बालहि मेलि।

इसटिक=होकी खेलने का डंडा। **फील्ड**=मैदान। **गोल**=वह स्थान, जहाँ गेंद मेल देने से विजय प्राप्त होती है। **बालहिं**=गेंद को।

[६०]

ग्राह - गहत गजराज की
गरज गहत ब्रजराज—
भजे 'गरीबनिवाज' को
बिरद बचावन - काज।

[६१]

नई लगन किय गेह,
अली, लली के ललित तन;
सूखत जात अछेह,
तरु ज्यों अंबरबेलि सों।

अछेह=लगातार। **अंबरबेलि**=आकाशवल्ली, अमरबेल।

[६२]

लेत - देत संदेस सब,
सुनि न सकत कछु कोय;
बिना तार को तार जनु
कियौ दृगनु तुम दोय।

इस दोहे में नेत्रों द्वारा बेतार का तार बनाया गया है।

[६३]

नयौ नेह दै पिय ! दियौ
जीवन - दियौ जगाइ ;
किंचित सिंचित राखियौ,
ह्वै सूनों न बुताइ।

नेह=(१) प्रेम, (२) तैल। **जीवन-दियौ**=जीवन का दीपक

[६४]

झपटि लरत, गिरि-गिरि परत,
पुनि उठि-उठि गिरि जात ;
लगनि-लरनि चख-भट चतुर
करत परसपर घात।

लगनि-लरनि=प्रेम-युद्ध में।

[६५]

अलि, चलि, थकि सुख-रैन में
जब जग सोवत मौन,
मम मन-मंदिर में करत
मंद कुलाहल कौन ?

[६६]

चख-झख तुव दृग-सर-सरस-
बूड़ि, बहुरि उतराय—
बेंदी - छटके में छटकि
अटकि जात निरुपाय।

छटका=मछलिया फँसाने का एक गड्ढा, जो दो जलाशयों के बीच तंग मेड़ पर खोदा जाता है। मछलियाँ एक जलाशय से दूसरे जलाशय में जाने के लिये कूदती और इसी गड्ढे मे गिर जाती हैं। **छटकि**=छूटकर। **निरुपाय**=लाचार।

[६७]

साजन सावन - सूर - सम
और कछू देखै न;
तुव दृग-दुति-कर-निकर किय
अंधबिंदुमय नैन।

साजन=प्यारा, पति। **कर-निकर**=किरणों का समूह। **अंधबिंदु**=आंख के भीतरी पटल पर का वह स्थान, जो प्रकाश ग्रहण नहीं करता, और जिसके सामने पड़ी हुई वस्तु दिखलाई नहीं देती।

[६८]

रमनी-रतननि हीर यह,
यह साँचो ही सोर;
जेती दमकति देह - दुति,
तेतौ हियौ कठोर!

हीर=हीरा।

[६९]

तिय उलही पिय-आगमन,
बिलखी दुलही देखि ;
सुखनभ - दुखधर - बीच छन
मन - त्रिसंकु - गति लेखि ।

उलही=प्रसन्न हुई । सुखनभ-दुखधर-बीच=सुख-रूपी आकाश और दुःख-रूपी धरती के मध्य में । मन-त्रिसंकु-गति=मन की त्रिशंकु-जैसी गति । त्रिशंकु=सूर्यवंश के वह पौराणिक नरेश, जिन्हें विश्वामित्र ने सदेह स्वर्ग पहुँचाने का प्रयत्न किया, और इंद्र ने पृथ्वी पर पटक दिया । शक्तियों के एक दूसरे के विरुद्ध प्रभाव से बेचारे बीच ही में लटक गए ।

[७०]

चख - तुरंग माते इते
छाके छबि की भाँग,
सुमति - छाँद छाँदहुँ, तऊ
छिन - छिन भरत छलाँग ।

माते=मदोन्मत्त हो गए । छाँद=रस्सी से । छाँदना=सटाकर ऐसे पैर बाँधना कि दूर तक न भाग सके ।

[७१]

कलिजुग ही मैं मैं लखी
अति अचरजमय बात—
होत पतित - पावन पतित,
छुवत पतित जब गात ।

[७२]

गांधी - गुरु तें ग्याँन लै,
चरखा - अनहद - जोर—
भारत सबद - तरंग पै
बहत मुकति की ओर।

भारत=(१) ज्ञान से रत, (२) भारत-देश। **मुकति**=(१) मोक्ष, (२) स्वाधीनता।

[७३]

जीवन - धन - जय - चाह,
धन कंकन - बंधन करति;
उत तन रन - उतसाह,
इत बिछुरन की पीर मन।

धन=युवती, पत्नी, वधू।

[७४]

दिन - नायक ज्यों - ज्यों बढ़त
करनि सप्रीति पसारि,
सकुचि, सिमिटि, रहि-रहि हटति
निसि - नवनारि निहारि।

दिन-नायक=सूर्य-रूपी नायक। **बढ़त**=आकाश में ऊँचे चढ़ता है, आगे बढ़ता है। **करनि**=(१) किरणों को, (२) हाथों को। **पसारि**=फैलाकर। **निसि-नवनारि**=रात्रि-रूपिणी नव-बाला।

[७५]

होत निरगुनी हू गुनी
बसे गुनी के पास ;
करत लुएँ खस सलिलमय
सीतल, सुखद, सुबास।

निरगुनी=गुण-हीन।

[७६]

जाति - जोंक भारत - रकत
संतत चूसत जाय ;
अंतरजाति - बिबाह को
नोंन देहु छिरकाय।

नोंन=लवण, नमक।

[७७]

सुलभ सनेह न ब्याह सों,
सुलभ नेह सों ब्याह ;
ब्याह किए पुनि नेह की
इकै नेह ही राह।

[७८]

अगम सिंधु जिमि सीप-उर
मुकता करत निवास,
तिमिर-तोम तिमि हृदय बसि
करि हृदयेस ! प्रकास।

[७९]

गई रात, साथी चले,
भई दीप - दुति मंद,
पिग्रत मोह - मदिरा कहा ?
अजहुँ चेति मति - मंद !

[८०]

जगि - जगि, बुझि-बुझि जगत में
जुगनू की गति होति ;
कब अनंत परकास सों
जगिहै जीवन - जोति ?

इस दोहे में अनंत ज्योति से संयोग प्राप्त करने को उत्सुक, पुनः-पुनः जन्म-मरणशील जीवात्मा की वेदना का वर्णन है।

[८१]

नव - तन - देसहिं जीति जनु
पट्टु जोबन - नृपराज—
निरमित किय कुच - कोट जुग
आपुनि रच्छा - काज ।

[८२]

नैंन - आतसी काँच परि
छबि - रबि - कर अवदात—
भुलसायौ उर - कागदहिं,
उड़्यौ साँस - सँग जात ।

आतसी काँच=आतिशी शीशा । अवदात=श्वेत, सुंदर । साँस=
(१) श्वास, (२) हवा ।

[८३]

पलक पोंछि पग - धूरि हौं
डारी दोसन धूरि ;
देह धूरि जापै करी,
लग्यौ उड़ावन धूरि ।

डारी दोसन धूरि=दोषों को छुपाया—भुलाया । **देह धूरि करी**=
शरीर को धूल में मिला दिया ।

[८४]

बिंब बिलोकन कों कहा
झमकि झुकति झर-तीर ?
भोरी, लखि तुव बदन-छबि
होत बिकल, चल नीर !

भोरी=भोली ।

[८५]

मन - मानिक - कन देहु
बिरह - ताप - तापित तुरत,
मुरछित कंचन - देहु
जिला देहु पुनि, पुन लहौ ।

मानिक-कन=जिससे सुनार सोने पर जिला देते हैं । **बिरह-ताप**=वियोगाग्नि । **देहु**=शरीर । **जिला देहु**=(१) जिला दो, आबदार बना दो (२) सजीव करो । **पुनि**=फिर । **पुन**=पुण्य ।

[८६]

हृदय कूप, मन रहॅट, सुधि-
माल माल, रस राग,
बिरह बृषभ, बरहा नयन,
क्यों न सिंचै तन - बाग ?

सुधि-माल=स्मृतियों की माला । **माल**=घट-माला । **बरहा**=सिंचाई के लिये बनी हुई नाली ।

[८७]

नजर - तीर तें नैंन - पुर
रच्छित राग्वन - हेत—
जनु काजर - प्राचीर पिय—
तिय - तन - भू - पति—देत।

काजर-प्राचीर=काजल का परकोटा।

[८८]

उत उगलत ज्वालामुखी
जब दुरबचनन - आग,
उठत हृदय - भू - कंप इत,
ढहत सुदृढ़ गढ़ - राग।

[८९]

नई - नई छबि - मधुरई
दई दई भरि प्यार;
वा सम छबि सिरजत थक्यौ
फिरि - फिरि सिरजनहार।

छबि-मधुरई=छवि की मिठास, सौंदर्य की सामग्रियाँ। **दई**=ब्रह्मा। **फिरि-फिरि**=(१) बार-बार, (२) लौट-लौटकर। **सिरजनहार**=ब्रह्मा।

[६०]

लरिकाई - ऊषा ढुरी,
झलक्यौ जोबन - प्रात,
छई नई छबि - रबि - प्रभा
बाल - प्रकृति के गात।

[६१]

भारत - सरहिं सरोजिनी
गांधी - पूरब - ओर—
तकि सोचति—"ह्वैहै कबै
प्रिय स्वराज - रबि - भोर ?"

सरोजिनी=श्लिष्ट पद है, जिससे भारत की प्रसिद्ध नेत्री श्रीसरोजिनी नायडू और कमलिनी, दोनो का अर्थ निकलता है। पूरब=पूर्व-दिशा।

[६२]

भारत - भूधर तें ढरति
देस - प्रेम - जल - धार,
आर्डिनेंस - इसपंज मों
सोखन चह सरकार *!

भूधर=पहाड़, पर्वत। आर्डिनेंस-इसपंज=आर्डिनेंस-रूपी स्पंज स्पंज झावें की तरह का एक प्रकार का बहुत मुलायम और रेशेदार पदार्थ होता है, जिसमें बहुत-से छोटे-छोटे छेद होते हैं। इन्हीं छेदों से वह बहुत-सा पानी सोख लेता है, और जब दबाया जाता है, तब उसमें का सारा पानी बाहर निकल जाता है।

* पाठांतर 'सोखि रही सरकार।'

[६३]

पर - राष्ट्रन - अरि - चोट तें
धन - स्वतंत्रता - कोट—
तटकर - परकोटा बिकट
राखत अगम, अगोट।

धन-स्वतंत्रता-कोट=आर्थिक स्वातंत्र्य-रूपी किला। **तटकर-परकोटा**=विदेश से आनेवाले माल (आयात) पर राज्य द्वारा लगाया गया कर-रूप परकोटा। **अगोट राखत**=छिपार रखता है।

[६४]

दिनकर - पुट - बर - बरन लै,
कर - कूँचीन चलाइ—
प्रकृति - चितेरी रचति पटु
नभ - पटु साँझ सुभाइ।

दिनकर-पुट=सूर्य-रूपी गोल पात्र, जिसमें रंग भरा हुआ है। **बर-बरन**=श्रेष्ठ वर्ण या रंग। **कर-कूँचीन**=किरणों की कूँचियों को। **पटु**=प्रवीण। **नभ-पटु**=आकाश के पट पर। **सुभाइ**=(१) स्वभाव से, (२) उत्तम भाव से।

[६५]

सुखद समै संगी सबै,
कठिन काल कोउ नाहिं;
मधु सोहैं उपबन सुमन,
नहिं निदाघ दिखराहिं।

मधु=बसंत। **निदाघ**=ग्रीष्म।

[६६]

साधुजनन पै धन कबौं
करत आक्रमन नाहिं;
लगत न घुन जैसें कबौं
कुचला - काठन माहिं।

धन=(१) रुपया-पैसा, संपत्ति, (२) सुंदर स्त्री।

नोट—कुचला-काष्ठ (लकड़ी) में घुन नहीं लगता।

[६७]

संगत के अनुसार ही
सबकौं बनत सुभाइ;
साँभर मैं जो कछु परै,
निरो नोंन ह्वै जाइ।

सुभाइ=स्वभाव। **साँभर**=राजपूताने की एक झील, जहाँ से सांभर-नामक नमक निकलता है।

[६८]

नीच मीच कों मत कहै,
जनि उर करै उदास;
अंतरंगिनी, प्रिय अली
पहुँचावति पिय - पास।

अंतरंगिनी, प्रिय अली=अंतरंग-भेद जाननेवाली प्यारी सखी।

[९९]

जनम - मरन - करियन - जुरी
जीवन - लरी अपार—
नियति-नटी कसि, लसि रही*
रिझै रिझावनहार।

जनम-मरन-करियन-जुरी=जन्म-मरण की कड़ियों से जुड़ी। **जीवन-लरी अपार**=(१) अनंत जीवों की लड़ी, (२) अनंत जीवनों (योनियों) की लड़ी।

* पाठांतर 'प्रकृति-परी पहिरति, लसति।'

[१००]

चख - खंजन परि किरकिरी
अंजन डारति धोइ;
अखिल निरंजन जो बसै,
क्यों न निरंजन होइ?

चख-खंजन=चपल नेत्र। **अंजन**=काजल। **निरंजन**=(१) अंजन-रहित, (२) दोष-रहित, माया-मोह-रहित, (३) स्वयं ईश्वर।

द्वितीय शतक

[१०१]

सुख - सँदेस के ज्वार चढ़ि
आई सखी सुजान,
लागी आनँद - सिंधु में
धन बूड़न - उतरान।

[१०२]

उर-पुर अरि - परनारि तें
रच्छित राखौ लाल!
नतरु बियोग - कृसानु में
जौहर ह्वै है बाल।

अरि-परनारि=शत्रु-रूपिणी अन्य नारी। कृसानु=अग्नि। जौहर ह्वै है=चिता प्रज्वलित कर जल मरेगी।

[१०३]

मन-कानन में धँसि कुटैल,
कानन-चारी नैंन—
मारत मति-मृगि मृदुल, पै
पोसत मृगपति-मैंन!

मन-कानन=मन-रूपी वन। **काननचारी नैंन**=(१) कानों तक फैले हुए नेत्र, (२) वन में विचरण करनेवाले अन्यायी (नय+न अर्थात् नय नहीं है जिनमें, ऐसे अन्यायी व्याध)। **मति-मृगि**=मति-रूपिणी मृगी। **मृगपति-मैंन**=कामदेव-रूपी सिंह।

[१०४]

कियौ कोप चित-चोप सों,
आई आनन ओप,
भयौ लोप पै मिलत चख,
लियौ हियौ हित छोप।

चोप=इच्छा, चाव। **ओप**=आभा। **छोप लियौ**=आच्छादित कर लिया।

[१०५]

छन-छन छबि की छाक सों
छलिया छैल! छकाइ—
छँटे-छँटे अब फिरत क्यों
मोह-मूरछा छाइ?

छाक=नशा। **छँटे-छँटे फिरना**=दूर-दूर रहना। कुछ संबंध या लगाव न रखना।

[१०६]

दंपति - हित - डोरी खरी
परी चपल चित - डार,
चार चखन - पटरी अरी,
झोंकनि झूलत मार।

मार=काम।

[१०७]

बिरह-बिजोगिनि कौ करत
सपन सजन - संजोग;
सखि, समाझि हू सों सरस
नींद, न नींदन - जोग।

संजोग=मिलन। जोग=योग्य, लायक।

[१०८]

धन - बिछुरन - छन - कन भए
मन कों मन - मन - ढेरि;
अँसुवन - कन - मनकन रही
प्रीति - सुमिरनी फेरि।

धन=नववधू।

[१०९]

ध्यान धरन दै, धरै अधर
  धीरैं ही अधरानि ;
उमड़ि उठै उर - पीर जनि
  प्रिय - चुंबन पहचानि ।

[११०]

हौं सखि, सीसी आतसी,
  कहति साँच - ही - साँच ;
बिरह - आँच खाई इती,
  तऊ न आई आँच !

[१११]

साँच, अहिंसा, प्रेम की
  तिरबेनी अनहायँ,
जग - मग में जगमग सुरग
  पग - पग ही पै पायँ ।

सुरग=स्वर्ग ।

[११२]

करी करन अकरन करनि
करि रन कवच - प्रदान;
हरन न करि अरि - प्रान निज
करनि दिए निज प्रान।

करन = दानवीर कर्ण, जिन्होने अपनी माता कुंती को अपना प्राण-रक्षक कवच प्रदान कर दिया था, और फिर अर्जुन के हाथों मारे गए थे। **करनि** = करनी। **करनि** = हाथो से।

[११३]

ईसाई, हिंदू, जवन,
ईसा, राम, रहीम,
बैबिल, बेद, कुरान में
जगमग एक असीम।

जवन = यवन, मुसलमान । **बैबिल** = बाइबिल। **असीम** = अनंत परमात्मा।

[११४]

लखि जग - पंथी अति थकित,
संझा - बाँह पसारि—
तम-सरायँ में दै रही
छाँह छपा - भटियारि।

पंथी = यात्री। **संझा-बाँह पसारि** = संध्या-रूपिणी बाहें फैलाकर। **तम-सरायँ** = अंधकार-रूपी सराय । **छाँह** = आश्रय, छाया। **छपा-भटियारि** = रात्रि-रूपिणी भटियारी।

[११५]

इकै जाति, भाषा ईकै,
    इकै जु लिपि - बिसतार—
भारत - भू में होय, तौ
    टूटैं बंधन - तार।

बिसतार = विस्तार।

[११६]

हिंदी - द्रोही, उचित ही
    तुव ऑगरेजी - नेह ;
दई निरदई पै दई
    नाहक हिंदी देह !

हिंदी=हिंदी-भाषा । दई निरदई=निर्दय ब्रह्मा । हिंदी=हिंदुस्थानी

[११७]

होयँ सयान अयान हू
    जुरि गुनवांन - समीप ;
जगमग एक प्रदीप सों
    जगत अनेक प्रदीप।

[११८]

हृदय - सून तें असत - तम
हरौ, करौ जो सून,
सून - भरन - हित तौ झपटि
झट आवैगौ सून।

हृदय-सून = हृदयाकाश, घटाकाश। **असत-तम** = असत् माया का अंधकार। **सून** = शून्य, एकांत, खाली। **सून-भरन-हित** = रिक्त स्थान (Vacuum) को भरने के लिये। **सून** = शून्य, पूर्ण, परमात्मा।

[११९]

दरसनीय सुनि देस वह,
जहँ दुति - ही - दुति होइ,
हौं बौरौ हेरन गयौ,
बैठ्यौ निज दुति खोइ।

बौरौ = पागल। **हेरन** = (१) खोजने, (२) देखने।

[१२०]

एक जोति जग जगमगै
जीव - जीव के जीय;
बिजुरी बिजुरीघर - निकसि
ज्यों जारति पुर - दीय।

जीय = जी, अंतःकरण। **दीय** = दीप, दिए।

[१२१]

बिरह - ताप - तपि भाप - सम
जब उर उड़त अचेत,
तव सुधि-सिंचित आँसु ही
तब सखि, जीवन देत।

[१२२]

रस - रबि - बस दोऊन के
जे हिलि - मिलि खिलि जात,
वेई तुव मुख - चंद लखि
चख - जलजात लजात।

रस = प्रेम। चख-जलजात = नेत्र-कमल।

[१२३]

जनु नवबय - नृप - मदन - भट
तिय - तन - धर - जय - हेतु—
हनत जु सर, उर - पुर उठत
उरज - समरपन - केतु।

नवबय-नृप-मदन-भट = यौवन-नरेश का कामदेव-रूपी योद्धा। धर = धरा, पृथ्वी। उर-पुर = वक्षःस्थल-रूपी नगर। समरपन-केतु = समर्पण-केतु। वह ध्वजा, जो आक्रमणकारी के भय से साहस-हीन हो आत्मसमर्पण कर देने के उद्देश्य से दिखलाई जाती है।

[१२४]

उड़ै चपल चित - चंग जब,
चट चौकस ह्वै जाय;
ढील दएँ जनि सजनि, कहुँ
तरुन - पुंज उरझाय।

तरुन-पुंज = नवयुवक-रूपी तरुओं के समूह में।

[१२५]

एती गरमी देखिके,
करि बरसा - अनुमान—
अली भली पिय पैं चली
लली - दसा धरि ध्यान।

नोट—(१) गरमी हो रही है, अतएव पानी बरसेगा। विरहिणी नायिका को वर्षा अधिक सताएगी। इसलिये नायक को बुलाने चली। (२) नायिका गरम (नाराज़) हो रही है, अब रुदन शुरू होगा। अतएव अपराधी नायक को बुलाने चली।

[१२६]

राखत दूरी दूरि ही
सखि, प्रेमिन को प्यार;
नित तिनके मन - कुसुम में
बसति बसंत - बहार।

[१२७]

फिरि - फिरि उत खिंचि जात चख
रूप - राग के जोर;
घूमि-घूमि पैरत चपल
ज्यों जल - अलि इक ओर।

जल-अलि = पानी का भँवरा, जो काले कीड़े के रूप में खटमल-जैसा होता है। यह एक ही ओर घूम-घूमकर तैरता है।

पाठांतर 'लालसा' अथवा 'रहचटै'।

| १२८ |

तरुन, तरुनई - तरु सरस
काटि न कलुस - कुठार;
सींचि सुजीवन, सुमन धरि,
करि निज सफल बहार।

कलुस = कलुष, पाप-कर्म। **सुजीवन** – (१) उत्तम जीवन, (२) शुद्ध जल। **सुमन** = (१) अच्छा मन, उत्तम विचारों से पूर्ण, विषय-वासना-रहित मन, (२) पुष्प। **सफल** = (१) फल-युक्त (२) सार्थक। **बहार** = (१) आनंद, उचित संभोग (२) वसंत।

| १२६ |

सखि, जीवन सतरंज - सम;
सावधान ह्वै खेलि;
बस जय लहिबौ ध्यान धरि,
त्यागि सकल रँगरेलि।

[१३०]

जोबन - उपबन - खिलि अली,
ललो - लता मुरझाय!
ज्यों - ज्यों भीजै* प्रेम - रस,
त्यों - त्यों सूखति जाय।

* पाठांतर डूबै।

[१३१]

को तो - सो जग - बीच
दानबीर दारा, भयौ?
नाच रही सिर मीच,
तऊ न त्यागी बान निज।

[१३२]

दुष्ट दुसासन दलमल्यौ
भीम भीमतम - भेस,
पाल्यौ प्रन, छाक्यौ रकत,
बाँधे कृस्ना - केस।

दलमल्यौ=मसल डाला, मार डाला। **भीम**=पांडव भीमसेन, जो महाभारत के युद्ध में पांडव-सेना के सेनापति थे। जब जुए में पांडवों के हार जाने पर दुष्ट दुर्योधन की आज्ञा से कौरव-सभा में दुःशासन ने द्रौपदी के केश पकड़कर खींचे थे, और वस्त्र खींचकर उसे नग्न करना चाहा था, तब महावीर भीम ने दुःशासन का रक्त-पान करने और उसी रक्त से द्रौपदी के बाल बँधवाने का प्रण किया था। अंत में भीम ने अपनी इस प्रतिज्ञा का पालन किया था। **भीमतम**=सबसे अधिक भयानक। **कृस्ना**=द्रौपदी।

[१३३]

सासन - कृषि तें दूर
दीन प्रजा - पंछी रहैं,
सासक - कृषकन क्रूर
आर्डिनेंस - चंचौ रच्यौ।

चंचौ=धोखा।

[१३४]

भजत तजत निसि - संग तम,
लखि निसिपति - मुख - चंद,
अंग - नखत लघुदुति दुरत,
सुदुति परत दुतिमंद।

अंग=रत्न। नखत=नक्षत्र।

[१३५]

पागल कों सिच्छा कहा?
कायर कों करवार?
कहा अंध कों आरसी?
त्यागी कों घर - बार?

[१३६]

चहत न धन, जस, मान, सुख,
मुकति - ध्यान हू नाहिं ;
उर उमंग जब-जब उठत,
उकति उदित कहि जाहिं ।

[१३७]

सहज सनेह, सुभाव मृदु,
सहजोगिता, सुकाम—
एई दंपति - धाम की
दीवारैं अभिराम ।

[१३८]

स्याम - सुरँग - रँग - करन - कर
रग - रग रँगत उदोत ;
जग-मग जगमग जगमगत,
डग डगमग नहिं होत ।

सुरँग-रँग-करन-कर = प्रेम-रूपी रंग की किरणो के हाथ । **उदोत**=प्रकाश से । **जग-मग**=जग का मार्ग । **जगमग जगमगत**=जगमग-जगमग होता है, प्रकाश झिलमिलाता है । **डग**=पद । **डगमग नहिं होत**=नहीं डिगता, नही थरथराता, नही फिसलता ।

[१३९]

बंसीधर - अधरन - धरी
बंसी बस कर लेति ;
सुधि - बुधि सजनि, भुलाइकैं
जोति इकै कर देति ।

[१४०]

दुग्गम दुग्ग - प्रबेस में
मानस मान न हार ;
राम - नाम की तोप बैं
तोरि लेहु दृढ़ द्वार ।

मानस=मन ।

[१४१]

सखी, दूरि राखौ सबै
दूती - करम - कलाप ;
मन - कानन उपजत - बढ़त
प्यार आप - ही - आप ।

मन-कानन=मन-रूपी वन । **प्यार**=(१) प्रेम, (२) एक वृक्ष-विशेष, जिसका बीज चिरौंजी है । मध्यभारत एवं बुंदेलखंड में इस वृक्ष को अचार का वृक्ष भी कहते हैं । यह वृक्ष जंगल में अपने आप पैदा होता है, किसी को इसे रोपना नही पड़ता ।

[१४२]

खरी साँकरी हित - गली,
बिरह - काँकरी छाइ—
अगम करी तापै अली,
लाज - करी बिठराइ।

लाज-करी=लज्जा-रूपी हाथी।

[१४३]

केहि कारन कसकन कगी
भले, मनचले लाल!
आँख - किरकिरी होइ यह,
आँख - पूतरी बाल?

आँख-किरकिरी=आखो में पड़कर खटकनेवाला तृण-कण, रज-कण आदि। वह, जिसे देखना न चाहें। **आँख-पूतरी**=प्रिय व्यक्ति।

[१४४]

आवत हित - बित - भीख - हित
पति चख - झोरी डारि,
देहु नयन - कर कोप - कन,
मन - भाजन सुसँभारि।

बित=धन। **झोरी डालना**=भिक्षा माँगने के लिये झोली उठाना, साधु या भिक्षुक हो जाना।

[१४५]

सोवत कंत इकंत, चहुँ
चितै रही मुख चाहि;
पै कपोल पै ललक* लखि
भजी लाज - अवगाहि।

रही मुख चाहि=प्रेम से मुँह ताकती रह गई। **अवगाहि**=नहाकर।

* पाठांतर 'पुलक'।

[१४६]

चख-चर चंचल, चार मिलि,
नवल बयस - थल आइ—
हित - झँपान लै चित - पथिक
मद - गिरि देत चढ़ाइ।

चर=(१) नौकर, (२) दूत। **नवल बयस**=नवयौवन। **झँपान**=वह सवारी, जिसे चार आदमी कंधे पर लेकर **पहाड़ पर** चढ़ाते हैं। पहाड़ी स्थानों पर अमीर लोग इस पर चढ़कर जाते हैं। **मद**=मदन, कामदेव, नशा, हर्ष।

[१४७]

बार[१] बित्यौ लखि, बार[२] झुकि
बार[३] बिरह के बार[४];
बार-बार[५] सोचति—"करी
केती बार[६] लबार[७]!"

१ दिन, समय। २ द्वार, दरवाज़ा। ३ बाला। ४ भार, बोझा। ५ फिर-फिर। ६ देर। ७ गप्पी, झूठा।

[१४८]

समय समुझि सुख-मिलन को,
लहि मुख - चंद - उजास,
मंद - मंद मंदिर चली
लाज - मुखी पिय - पास।

उजास=प्रकाश, प्रभा।

[१४६]

गुंजनिकेतन - गुंज तें
मंजुल बंजुल - कुंज,
बिहरैं कुंजबिहारि तहँ
प्रिय, प्रवीन, रस-पुंज।

गुंजनिकेतन=भौरा। **बंजुल**-अशोक का पेड़।

[१५०]

मोह - मूरछा लाइ, करि
चितवन - करन - प्रयोग,
छबि - जादूगरनी करति
बरबस बस चित - लोग।

करन=किरण-रूपी हाथ। **लोग**=व्यक्ति।

[१५१]

छुट्यो राज, रानी बिकी,
सहत डोम - गृह दंद,
मृत सुत हू लखि प्रियहिं तें
कर माँगत हरिचंद !

दंद=दुःख, कष्ट। मृत=मरा हुआ। प्रियहिं तें=प्रिया से भी।

[१५२]

छुआछूत - नागिन - डसी
परी जु जाति अचेत,
देत मंत्रना - मंत्र तें
गांधी - गारुड़ि चेत।

मंत्रना-मंत्र=उपदेश अथवा सम्मति-रूपी मंत्र। गारुड़ि (गारुड़ी)=साँप का विष उतारनेवाला।

[१५३]

कूटनीति - पच्छिम लखत
राष्ट्रसंघ - रबि अस्त—
अस्त्र - सस्त्र - दुति - बृद्धि में
राष्ट्र - नखत भे ब्यस्त।

[१५४]

बात - भूलि रे फूल, यौं
निज श्री - भूलि न फूलि;
काल कुटिल को कर निरखि,
मिलन चहत तैं धूलि।

बात=(१) हवा, वायु, (२) बातें। श्री=(१) शोभा (२) संपत्ति। न फूलि=गर्व न कर।

[१५५]

होत अथिर रितु - सुमन - सम
सदा बाहरी रूप;
पर उर - अंतर - रूप चिर
सदाबहार अनूप।

[१५६]

डारे हास - फुहार - कन
करन - कियारिन माहिं—
सींचें कवि-माली सुरस,
रसिक - सुमन बिकसाहिं।

करन=कर्ण, कान। सुमन=(१) सुंदर मन, (२) पुष्प।

नोट—यह दोहा द्विवेदी-मेला (प्रयाग) में, हास-परिहास-सम्मेलन के सुअवसर पर, वहीं तत्काल लिखा गया था।

[१५७]

सतसंगति लघु - बंस हू
हरि अवगुन गुन देति;
केहि न कान्ह-अधरन-धरी
बंसी बस करि लेति ?

लघु-बंस=(१) ओछा कुल, (२) तुच्छ बाँस।

[१५८]

धाइ द्वारिकाराइ द्रवि,
पुनि सुभाइ मुसकाइ,
सिर नवाइ, गहि पाइँ, उर
लाइ, रहे लपटाइ।

नोट—सुदामा से कृष्ण का मिलन।

[१५९]

नंदलाल - रँग - आलरँग
चित - चीरहिं रँगि लेहु;
जगत - आलजंजाल को
दीमक लगन न देहु।

रँग=प्रेम। **आलरँग**—इस रंग में रँगे गए कपड़े पर दीमक नहीं लगती। **आलजंजाल**=झंझट, बखेड़ा, माया।

[१६०]

तू हेरत इत - उत फिरत,
वह घट रह्यौ समाइ ;
आपौ खोवै आपनों,
मिलै आप ही आइ।

घट=हृदय। आपौ=अहंत्व, अहंकार। आप ही=स्वयं परमात्मा।

[१६१]

संदेसन - पठवन, लिखन,
मिलन कहा मम प्रान ?
मन दोउन के इक जबै,
बिछुरन मिलन समान।

[१६२]

धरि हरि - छबि हिय - कोस में
गोपी, हित - पट गोइ ;
बिरहा - डाकू, समय - ठग
तेहि हरि सकैं न कोइ।

हिय-कोस=हृदय का ख़ज़ाना। हरि सकैं=हरण कर सके।

[१६३]

जगति जोति तें प्रियै पतँग
जारति जाय लुभाय ?
हँसि न दीपिका, लखि अरी
तुव जीवन ह्वै जाय !

जोति=(१) प्रभा, (२) सुंदरता । जाय=वृथा । **जीवन**=(१) प्राण, ज़िंदगी, (२) घी ।

[१६४]

बिछुरन सुख - खनि साँचई,
मन बिहरै सुखकंद ;
छन - भर को सुख मिलन में,
बिछुरन चिर आनंद ।

[१६५]

झीनें अंबर झलमलति
उरजनि - छबि छितराइ ;
रजत - रजनि जुग चंद - दुति
अंबर तें छिति छाइ ।

अंबर=वस्त्र । रजत-रजनि=चाँदनी रात । **अंबर तें**=(१) आकाश से निकलकर, (२) बादल से निकलकर ।

[१६६]

जनु जिय जोबन - बटपरा
तिय - तन - रतन लुभाइ—
लयौ चहत, तातें गयौ
मन - स्वामी अकुलाइ।

[१६७]

सर लगि छत करि, हरि रकत,
हतप्रभ करत सुअंग ;
चितवन सुख भरि, चपल करि,
चित पर चीतत रंग।

छत = घाव। हतप्रभ = प्रभा-हीन, श्री-विहीन। रंग = प्रेम-रंग।

[१६८]

धाय धरति नहिं अंग जो
मुरछा - अली अयान,
उमगि प्रान - पति - संग तो
करतो प्रान पयान।

अयान = अजान। पयान = गमन।

[१६९]

बिरह - उदधि - दुख - बीचि तें
    नारी - नाव बचाइ—
लई आइ पिय - ज्वार जनु
    अलि, उर - तीर लगाइ।

पिय-ज्वार = प्रिय पति-रूपी ज्वार।

[१७०]

लहि पिय - रबि तें हित - किरन
    बिकसित रह्यौ अमंद ;
आइ बीच अनरस - अवनि
    कियौ मलिन मुख - चंद।

पिय-रबि = प्रिय पति-रूपी सूर्य। **बिकसित** = खिला। **अनरस-अवनि** = रुष्टता-रूपिणी पृथ्वी।

[१७१]

जुगन - जुगन बिछुरे रहे
    हम तें हरिजन लोग,
गाँधी - जोगी - जोग किय
    छन में जुगल - सँजोग।

[१७२]

जुद्ध - मद्ध बल सों सबल
 कला दिखाई देति ;
निरबल मकरिहु जाल बुनि
 सरप - दरप हरि लेति ।

मकरिहु = मकड़ी भी । **सरप-दरप** = सर्प का घमंड ।

[१७३]

इक मियान में रहि सकत
 कहुँ जदि जुग तरवार,
तौ भारत हू सहि सकत
 जुग - सासन को भार !

[१७४]

चंचल अंचल छलछलति
 जिमि मुख - छबि अवदात,
सित घन छनि - छनि झलमलति
 तिमि दिनमनि - दुति प्रात ।

[१७५]

निरबल हू दल बाँधिकें
    सबलहिं देत हराइ;
ज्यों सींगन सों गाय - गन
    बन - पति देत भगाइ।

[१७६]

कबि सँग में राखत हुते
    जे नरपाल सुजान,
राखत आज खुसामदी,
    मोटर, गनिका, स्वान।

[१७७]

मिलत न भोजन, नगन तन,
    मन मलीन, पथ - बासु,
निरधनता साकार लखि
    ढारति करुनहु आँसु।

करुनहु = करुणा भी।

[१७८]

निठुर, नीच, नादान
  बिरह न छाँड़त संग छिन;
सहृदय सजनि सुजान
  मीच, याहि लै जाहु किन ?

[१७९]

हीय - दीय - हित - जोति लै
  कन - कन - बासी स्याम !
दृग - दरपन बिंबित करौ
  बिमल बदन बसु जाम।

हीय-दीय = हृदय रूपी दिया।

[१८०]

जोति - उघरनी तें अजहुँ
  खोलि कपट - पट - द्वारु—
पंजर - पिंजर तें प्रभो,
  पंछी - प्रान उबारु।

पंजर-पिंजर = शरीर-रूपी पिंजड़ा।

[१८१]

बिरह-सिंधु उमड़्यौ इतौ
पिय - पयान - तूफान,
बिथा - बीचि - अवली अली,
अथिर प्रान - जलजान।

पिय-पयान-तूफान = प्रिय पति का गमन-रूपी तूफान। **बिथा-बीचि-अवली** = व्यथा की लहरों की क़तार में। **प्रान-जलजान** = प्राण-रूपी जहाज़।

[१८२]

खरी दूबरी तिय करी
बिरह निठुर, बरजोर,
चितवन चढ़ति पहार जनु
जब चितवति मम ओर।

[१८३]

आँसु - माल तुव पहिरिहै
किमि तन बिरहा - ऐन?
पीर - सिंधु उर उठत लखि
नीर - बिंदु तुव नैन!

[१८४]

राधाबर - अधरन - धरी
बाँसुरिया बौराइ—
प्रतिपल पियत पियूख, पै
बिसम बिसहिं बरसाइ।

अधरन=ओंठ। **पियूख**=अमृत।

| १८५ |

अलि, चंचल चित - फंद में
अदभुत बंद लखाइ;
चालक चतुर - चलाँक हू
बाँधन चलि बँधि जाइ!

फंद=फंदा। **चालक**=चलानेवाला।

[१८६ |

है कलिहारी - तूल,
कलहारी, पिय - कल - हरनि;
मुख तौ सुंदर फूल,
हिये - मूल बिस - गाँठ पै।

कलिहारी=एक विषैला पौधा, जिसका फूल अत्यंत सुंदर होता है, और जड़ में विषैली गाँठें रहती हैं। **तूल**=तुल्य, समान। **कलहारी**=कलहकारिणी, कर्कशा।

[१८७]

कहा समुझि इनकों दियौ
लोयन लोयन - नाम,
लोय - मरिस बालम - बिरह
बरत जु बिना बिराम।

लोयन=लोगों ने। **लोयन**=(१) लोचन, (२) लोय (लौ) नहीं है जिनमें। **लोय**=लौ।

[१८८]

सुरस - सुगंध - बिकास - बिंधि
चतुर मधुप मधु - अंध !
लयौ पदुमिनी - प्रेम परि
भलो ज्ञान को धंध !!

[१८९]

जोबन - मकतब तौ अजब
करतब करत लखाय ;
पढ़ैं प्रेम - पोथी सुमति,
पै मति मारी जाय !

सुमति=अत्यंत बुद्धिमान्।

[१६०]

गुंजनिकेतन - गुंज - जुत
हुतौ कितौ मनरंज !
लुंज - पुंज सो कुंज लखि
क्यों न होइ मन रंज ?

गुंजनिकेतन=भौंरा । **मनरंज**=मनोरंजन करनेवाला । **लुंज**=ठूँठ ।

[१६१]

देस कला नव बिसतरत,
हरत ताप चहुँ ओर,
करत प्रफुल्ल प्रफुल्लचँद
चतुरन - चित्त - चकोर ।

प्रफुल्लचँद=बंगाल के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता सर प्रफुल्लचंद्र राय । कला, ताप, प्रफुल्ल, प्रफुल्लचंद, ये चारो श्लिष्ट पद हैं ।

[१६२]

दीसत गरभ स्वराज को
स्वेत पत्रिका - पेट ;
सब गुन जुत कछु जुगन में
ह्वै है भारत - भेट ।

स्वेत पत्रिका=White Paper.

[१६३]

काम, दाम, आराम को
सुघर समनुवै होइ,
तौ सुरपुर की कलपना
कबहूँ करै न कोइ ।

समनुवै (समन्वय)=संयोग । **कलपना**=कल्पना ।

[१६४]

जटित सितारन - छंद,
अंबर अंगनि झलमलत ;
चली जाति गति मंद,
सजनि - रजनि मुख - चंद - दुति ।

सितारन=(१) सलमा-सितारा, (२) तारागण । **छंद**=समूह । **अंबर**=(१) वस्त्र, (२) आकाश ।

[१६५]

बसि ऊँचे कुट यों सुमन !
मन इतरैए नाहिं ;
यह बिकास दिन द्वैक को,
भिलिहै माटी माहिं ।

कुट=(१) वृक्ष, (२) गढ़ । **सुमन**=(१) फूल, (२) अच्छे मनवाला । **बिकास**=(१) प्रस्फुटन, खिलना, (२) उन्नति, वृद्धि । **मिट्टी में मिलना**=(१) टूटकर धूल में गिरना, (२) नष्ट होना ।

[१९६]

कंचन होत खरो - खरो,
लहे आँच को संग;
सुजनन पै सतसंग सों
चढ़त चौगुनों रंग।

[१९७]

कविता, कंचन, कामिनी
करैं कृपा की कोर,
हाथ पसारै कौन फिर
वहि अनंत की ओर?

[१९८]

फूटि - फूटि बँधि रव करैं
बीचि त्रिबेनी - बीच;
फूटि - फूटि रोवैं मनौं
मुकत निरखि नर नीच।

फूटि-फूटि=पृथक् हो-होकर। रव=आवाज़। बीचि=लहर।

[१९९]

चहूँ पास हेरत कहा
करि - करि जाय प्रयास ?
जिय जाके साँची लगन,
पिय वाके ही पास !

जाय=वृथा ।

[२००]

नंद-नंद सुख - कंद को
मंद हँसत मुख - चंद,
नसत दंद - छलछंद - तम,
जगत जगत आनंद ।

दंद=द्वंद्व ।

दोहों की अकारादिक्रम-सूची

सम्मतियाँ

१. संस्कृत-संसार के प्रकांड पंडितों की राय

(१) संस्कृत के प्रकांड पंडित, दर्शन-शास्त्र के अद्वितीय विद्वान् डॉक्टर भगवानदास एम्० एल्० ए०—जैसी सुंदर कविता, वैसी ही सुंदर वेश-भूषा अर्थात् पुस्तक की छपाई आदि।... मन में निश्चय हुआ कि अपने विषय और प्रकार के किन्हीं दोहों से कम नहीं हैं।

दोहे बहुत अच्छे हैं, बहुत अच्छे हैं। ईश्वर आपकी कविता-शक्ति को अधिकाधिक बल और विकास दें। पर यह भी चाहता हूँ कि और ऊँचे विषय और प्रकार की ओर उस शक्ति को झुका भी दें। चाहे स्वाभाविक अल्परसता के कारण, चाहे वार्धक्य से बुद्धि की स्फूर्ति के ह्रास और नीरसता की वृद्धि के कारण, मेरे मन में फिर-फिर यही बात उठती रहती है कि जैसे तुलसीदासजी ने 'रामायण' लिखकर "प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः", जिससे आज तीन सौ वर्ष से करोड़ों भारतवासियों के हृदय के अँधेरे में उजाला होता रहा है, वैसे ही कोई 'भागवत' या 'कृष्णायन' लिखता, जिससे वह उजाला और स्थायी और उज्ज्वल हो जाता, तो बहुत अच्छा होता। कई कवियों से समय-समय पर सूचना भी की, पर अब तक इस ओर किसी ने मन नहीं दिया। आपको बहुत अच्छी शक्ति मिली है, उसका ऊँचा उपयोग कीजिए।

'भागवत' लिखते बन जाय, तो करोड़ों ही पुश्त-दर-पुश्त लाभ

उठावेंगे, सराहेंगे, हृदय से आशीर्वाद देंगे। देखिए, बने, तो संस्कृत-भागवत में नहाइए, उसके रस में भीगिए, उसको आकंठ पीजिए, और फिर जैसे सूर्य समुद्र का पानी सोखकर बरसाता है, वैसे हिंदी-भाषा में उस रस की वर्षा कीजिए।

(२) संस्कृत और अँगरेज़ी के प्रकांड पंडित डॉक्टर गंगानाथ झा, भूतपूर्व वाइस-चांसलर प्रयाग-विश्वविद्यालय— आजकल तो बेचारी ब्रजभाषा ऐसी दुर्दशा में गिरी है कि अभिनव साहित्य-पुरंधरों द्वारा प्रायः उसकी निंदा ही सुनने में आती है। ऐसी दशा में आपने वृद्धा को हस्तावलंब देने का साहस किया, तावन्मात्रेण आपका उद्योग सराहनीय है। उस पर भी जब आपने प्रत्यक्ष दिखा दिया कि ब्रजभाषा की कविता अब भी उत्तम कोटि की—मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि सर्वोत्तम कोटि की—हो सकती है, तब तो आप धन्यवाद ही नहीं, पूर्ण आशीर्वाद के पात्र हैं।

(३) संस्कृत के वर्तमान समय में संसार के सबसे बड़े विद्वान्, जयपुर-राजसभा के प्रधान पंडित, महामहोपदेशक, समीक्षाचक्रवर्ती, विद्यावाचस्पति श्रीपंडित मधुसूदन शर्मा ओझा जयपुर-निवासी—यह दोहावली बिहारी-सतसई से स्पर्धा करने-वाली ही नहीं, प्रत्युत कई भावों में उसके टक्कर लगानेवाली पैदा हो गई है। इसमें नयन वर्णन सामाजिक विचार और शांत-रस आदि के कई दोहे बिहारी से बढ़कर हैं।

भार्गवजी की रचना के चमत्कार और मौलिकता तो प्रधान गुण हैं। आपकी कोमल-कांत पदावली बड़ी ही श्लाघ्य है। इस कार्य के लिये मैं भार्गवजी को हार्दिक धन्यवाद देकर उन्हें प्रोत्साहित करता हूँ कि वह अपने इस ग्रंथ को आगे और भी बढ़ाकर हिंदी-साहित्य का उपकार करें।

(४) संस्कृत-संसार के सर्वश्रेष्ठ काव्य-मर्मज्ञ, विद्वच्छिरोमणि पूज्यपाद पं० बालकृष्णजी मिश्र महाराज, हिंदू-विश्वविद्यालय में संस्कृत-साहित्य-विभाग के माननीय अध्यक्ष—

कविकुलकुमुदकलाकरेण श्रीदुलारेलालभार्गवेण कृतां दोहावलीमाकलयन् अतितमानन्दमनुविन्दामि। यदस्यां रसानुसारिणा छन्दसा रीत्या कोमलतया मांसलत्वेन च मनोरमतास्पदानि विद्यन्ते पदानि। अभिधया लक्षणया चाप्रधानवृत्त्या प्रतिपादिताः पदार्थाः प्रायेण विच्छित्ति विशेषाधायिव्यङ्ग्यव्यञ्जकतया पदकदम्बकानीव गुणपदवीं नातिशेरते सत्यपि समुदये विना प्रयासमायातानां शब्दार्थालङ्कृतीनाम्। रसेषु शृङ्गार एव प्राधान्येन ध्वनेरध्वनि पथिकतां दधाति। इयं किल सहृदयहृदयहारिणी विहारीसतसईप्रभृतिमपि पुरातनीं दोहावलीं विस्मारयति स्म, तस्मान्न स्तोकतोऽपि नास्ति विप्रतिपत्तिरस्या अत्युपादेयतायाम्। किंतु व्यङ्ग्यालङ्कारप्रकाशकं विवरणमस्यात्यन्तमावश्यकम् येनाल्पमतीनामपि मानसे प्रमोदः पादमादधीतेति।

(कवि-कुल-कुमुद-कलाकर श्रीदुलारेलाल भार्गव द्वारा प्रणीत दोहावली को पढ़कर मुझे अतितम (अतुल) आनंद हुआ। इसके पद रसानुसारी छंद, रीति, कोमलता और पुष्टता से युक्त होने के कारण मनोरमता के सदन हैं। विना प्रयास आए हुए शब्दालंकारों और अर्थालंकारों के साथ-ही-साथ अभिधा, लक्षणा और व्यंजना से प्रतिपादित अर्थ द्वारा वैचित्र्य-विशेष प्रदर्शित करते हुए ये पद गुण-पदवी का भी अनुसरण करते हैं। रसों में शृंगार ही प्रधानतया ध्वनि के मार्ग का अनुगामी है। सहृदय जनों का हृदय हरण करनेवाली इस 'दोहावली' ने बिहारी-सतसई आदि पुरानी दोहावलियों को भी भुला दिया है, अतः इसकी अत्यंत उपादेयता रंचकमात्र भी अस्वीकार नहीं की जा सकती। किंतु इसके व्यंग्यालंकार

का स्पष्टीकरण अत्यंत आवश्यक है, जिससे थोड़ी बुद्धिवाले भी इसका रसास्वादन कर सकें।)

नोट—थोड़ी बुद्धिवालों के लिये भी विस्तृत टीका और व्याख्या-सहित एक संस्करण निकाला जा रहा है। टीका सुप्रसिद्ध काव्य-मर्मज्ञ सिलाकारीजी ने की है।—प्रबंधक गंगा-ग्रंथागार

२. हिंदी-विद्वानों और काव्य-मर्मज्ञों की राय

(१) महाकवि रत्नाकरजी के 'ऊधव-शतक' और महाकवि हरिऔधजी के 'रस-कलस' के भूमिका-लेखक तथा सर्वप्रधान प्रशंसक, वर्तमान समय में व्रजभाषा-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ आलोचक विद्वद्वर पं० रमाशंकरजी शुक्ल 'रसाल' एम्० ए० (हिंदी-अध्यापक, प्रयाग-विश्वविद्यालय) दुलारे-दोहावली को आधुनिक व्रजभाषा-काव्यों से ही नहीं, बिहारी-सतसई तक से ऊँची रचना बतलाते हैं। सम्मति पढ़िए—

यह तो आपको स्मरण ही होगा कि मैं आपकी 'दोहावली' को साहित्य-सदन की 'रत्नावली' कह चुका हूँ। दोहे वास्तव में अपने रंग-ढंग के अप्रतिम हैं। ये बड़े ही ललित, काव्य-कला-कलित एवं ध्वनि-व्यंजना-वलित हैं। जैसा अन्य विद्वानों ने इस 'दोहावली' के संबंध में कहा है, वैसा प्रत्येक काव्य-कला-कौशल-प्रेमी सहृदय व्यक्ति कहेगा। इसकी महत्ता-सत्ता दिन-प्रति-दिन बढ़ेगी। सत्काव्य के सभी लक्षण इसमें सुंदर रूप में प्राप्त होते हैं। यों तो सतसइयाँ कई हैं, किंतु आपकी यह 'दोहावली' अप्रतिम ही है। भाषा-भाव, काव्य-कौशल, सभी दृष्टि से यह सर्वथा सराहनीय है। आप इस अमर रचना से अमर हो गए। व्रजभाषा-काव्य के रसाल-वन में कल कंठ से ककुभ कूजित करनेवाला कोकिल यदि आपको इस रचना के लिये कहा जाय, तो सर्वथा उपयुक्त ही होगा। यदि इस रचना को मुक्तक-

माला की मंजु मणि-मनका कहें, तो अत्युक्ति न होगी। यदि विद्वानों ने इसके दोहों को बिहारी के दोहों के समकक्ष या उनसे भी कुछ उन्नत कहा है, तो ठीक ही कहा है। ब्रजभाषा-काव्य-क्षेत्र में इस समय इस रचना तथा आपको बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त हो गया है।...

आपने ब्रजभाषा-काव्य को इस रचना के रसामृत से सिंचित कर नव-जीवन प्रदान कर दिया है। अब यह कहना, जैसा कुछ लोग कहते हैं, कि अमुक कवि (सत्यनारायण, हरिश्चंद्र आदि) ब्रजभाषा का अंतिम कवि था, सर्वथा भ्रम-मूलक और भिन्न-रुचि-मात्र-सूचक ठहरता है। किं बहुना? निष्कर्ष यह है कि इसमें वाक्य-लाघव, अर्थ-गौरव, माधुर्य एवं मंजु मार्दव सर्वत्र चारु चातुर्य-चमत्कार के साथ मिलते हैं। वर्तमान समय में प्रकाशित काव्यों में यह सबसे उत्कृष्ट है।

(२) हिंदी-संसार के सर्वश्रेष्ठ समालोचक, विद्वद्वर, कवि-श्रेष्ठ पं० रामचंद्रजी शुक्ल (प्रोफेसर हिंदू-विश्वविद्यालय, बनारस)—केवल सात सौ दोहे रचकर बिहारी ने बड़े-बड़े कवियों के बीच एक विशेष स्थान प्राप्त किया। इसका कारण है उनकी वह प्रतिभा, जिसके बल से उन्होंने एक-एक दोहे के भीतर क्षण-भर में रस से स्निग्ध अथवा वैचित्र्य से चमत्कृत कर देनेवाली सामग्री प्रचुर परिमाण में भर दी है। मुक्तक के क्षेत्र में इसी प्रकार की प्रतिभा अपेक्षित होती है। राजदरबारों में मुक्तक-काव्य को बहुत प्रोत्साहन मिलता रहा है, क्योंकि किसी समादृत मंडली के मनोरंजन के लिये वह बहुत ही उपयुक्त होता है। बिहारी के पीछे कई कवियों ने उनका अनुसरण किया, पर बिहारी अपनी जगह पर अकेले ही बने रहे। हिंदी-काव्य के इस वर्तमान युग में—जिसमें नई-नई भूमियों पर नई-नई पद्धतियों की परीक्षा चल रही है—किसी को यह आशा न थी कि कोई पथिक सामान लादकर बिहारी के उस पुराने रास्ते पर चलेगा।......

बिहारी के कुछ दोहों में उक्ति-वैचित्र्य प्रधान है और कुछ में रस-विधान। ऐसी ही दो श्रेणियों के दोहे इस 'दोहावली' में भी हैं। रसात्मक दोहों में बिहारी की-सी मधुर भाव-व्यंजना और वैचित्र्य-प्रधान दोहों में उन्हीं का-सा चमत्कार-पूर्ण शब्द-कौशल पाया जाता है। जिस ढंग की प्रतिभा का फल बिहारी की सतसई है, उसी ढंग की प्रतिभा का फल दुलारेलालजी की यह दोहावली है, इसमें संदेह नहीं। कुछ दोहों में देश-भक्ति, अछूतोद्धार आदि की भावना का अनूठेपन के साथ समावेश करके कवि ने पुराने साँचे में नई सामग्री ढालने का अच्छी कला दिखाई है। आधुनिक काव्य-क्षेत्र में दुलारेलालजी ने ब्रजभाषा-काव्य की चमत्कार-पद्धति का मानो पुनरुद्धार किया है। इसके लिये वह समस्त ब्रजभाषा-काव्य-प्रेमियों के धन्यवाद के पात्र हैं।

(३) आचार्य-श्रेष्ठ बाबू श्यामसुंदरदास के सर्वश्रेष्ठ शिष्य, हिंदी के एकमात्र डी० लिट्०. हिंदी के उदीयमान लेखक और सुकाव्य-मर्मज्ञ डॉक्टर पीतांबरदत्तजी बड़थ्वाल, जिन्होंने प्राचीन हिंदी-साहित्य का विशेष रूप से अध्ययन किया है—

'दोहावली' पढ़कर यत्परो नास्ति आनंद हुआ। आप अपनी रचना को 'नीरस' कैसे कहते हैं? यदि ऐसी सरस रचना को नीरस कहा जाय, तो सरस रचनाओं की गिनती में कितनी आ पावेंगी? आपकी अनोखी सूझ-बूझ, ललित शब्द-साधना, चमत्कारी संबंध-गुफन, सब सराहनीय हैं। आप सचमुच वाग्देवी के दुलारेलाल हैं। उसने काव्य-प्रणयन के भृगु-पंथ* को आपके लिये देहली का पैंड़ा बनाकर आपके

---

*भृगु-पंथ बदरीनारायण से आगे है, जिस पर चलना असंभव ही-सा है। संभवतः इस मार्ग से ही भृगु मुनि नारायण के दर्शन के लिये अपने आश्रम से उतरते होंगे।

भार्गवत्व की रक्षा की है। मैं राष्ट्रीय विषय ले आने-मात्र के लिये आपकी प्रशंसा नहीं करूँगा, बल्कि इस कारण कि राष्ट्रीय घटनाओं को भी आपने काव्य के साँचे में ढाल दिया है।

इस रूखे ज़माने में भी आपने पुरानी रसिकता के मुग्धकर दर्शन कराए हैं। इसमें संदेह ही नहीं कि आप इस युग के 'बिहारी' हैं। वह समय दूर नहीं जान पड़ता, जब 'बिहारीलाल' कहते ही हठात् दुलारेलाल भी मुँह से निकल पड़ेगा।

(४) काव्य-कल्पद्रुम के यशस्वी लेखक, धुरंधर काव्य-मर्मज्ञ, कविवर श्रीयुत कन्हैयालालजी पोद्दार—जब कि खड़ी बोली के मेघाच्छन्न, अंधकारावृत नभोमंडल में विरल नक्षत्र की भाँति ब्रजभाषा-काव्य लुप्तप्राय हो रहा है, ऐसे समय में दुलारे-दोहावली की भाव-पूर्ण, रमणीय, चित्ताकर्षक रचना वस्तुतः चंद्रोदय के समान है।

दुलारे-दोहावली की शैली ब्रजभाषा के प्राचीन दोहा-साहित्य के अनुरूप कोमल-कांत पदावली-युक्त, रस, भाव, ध्वनि, अलंकार आदि सभी काव्योचित पदार्थों से विभूषित है। कुछ दोहे तो बड़े ही चित्ता-कर्षक हैं। वे तुलनात्मक आलोचना में महाकवि बिहारीलाल के दोहों की समकक्षता उपलब्ध कर सकते हैं।

निस्संदेह दुलारे-दोहावली अपनी अनेक विशेषताओं के कारण ब्रजभाषा-साहित्य में उच्च स्थान उपलब्ध करने योग्य है।

(५) हिंदी-संसार में व्याकरण के सबसे बड़े पंडित, व्याकरणाचार्य कविवर पं० कामताप्रसादजी गुरु—आपकी रचना प्रशंसनीय है। आपके रचे हुए दोहे पढ़ने से अनेक स्थानों में बिहारीलाल का स्मरण हो आता है...। कुछ दिनों में 'दुलारे-सतसई' तैयार होकर हिंदी-साहित्य का गौरव बढ़ाएगी।...आपकी दोहावली व्याकरण की भूलों से सर्वथा मुक्त है।

ाव्य वर्तमान समय में बहुत ही कम हिंदी-कवियों ने लिखने का साहस किया है, और जिन लोगों ने लिखा है, उनमें आपकी रचना मुझे तो भाई, बहुत सुंदर जँची है। क्योंकि अन्य लोगों की रचना में ऐसे अर्थ-गांभीर्य, भाव-सौंदर्य और काव्यालंकार मुझे दिखाई नहीं दिए।...

आपके कई दोहे बिहारी से श्रेष्ठ ज़रूर उतरेंगे। और, बिहारी के दोहों में जो कहीं-कहीं अश्लीलता का दोष लगाया जाता है, सो आपके दोहों में कहीं नहीं है। आपकी सुरुचि, प्रतिभा, विदग्धता, रचना-चातुरी और व्रजभाषा पर आपका इतना अधिकार देखकर कौतूहल होता है।

हिं० सा० सम्मेलन के पद्य-संग्रह में आपकी दोहावली से कुछ दोहे मैं रखवा रहा हूँ।

(१०) पंजाब के प्रसिद्ध विद्वान, स्त्री-शिक्षा के स्तंभ तथा कन्या-महाविद्यालय के संस्थापक स्वर्गीय लाला देवराज—मैं समझता था, अब व्रजभाषा में वैसी रस-भरी रचना नहीं हो सकती, पर आपकी दोहावली को देखकर मैं कुछ और ही समझने लगा हूँ। क्या आपके रूप में बिहारी ने अवतार तो नहीं ले लिया? 'दुलारेलाल' और "बिहारीलाल' नाम बहुत मिलते हैं। काम में भी सादृश्य है। नामों के अक्षर और मात्राएँ भी समान। आप बिहारी के आधुनिक संस्करण तो नहीं? दोहे सर्वथा अच्छे हैं। दोहावली क्या सतसई में परिणत होगी? हो!

(११) हिंदी की प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती अमृतलता स्नातिका, प्रभाकर—मैं 'दुलारे-दोहावली' की कितने दिनों से प्रशंसा सुनकर देखने को लालायित हो रही थी। मेरे अहोभाग्य हैं कि मुझे भी इस पुस्तिका का पीयूष पान करने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

इसके एक-एक पद्य में अलंकारों की झड़ी तथा ब्रजभाषा का सौष्ठव निहारकर श्रीभार्गवजी की अलौकिक कृति पर मन गद्गद हो जाता है। मैं तो समझ रही थी कि कवि बिहारीलाल के साथ ही ब्रजभाषा की कविता लुप्त हो गई। पर मेरा मनोभाव ही ग़लत निकला। दुलारे-दोहावली के ६६, ६७ नंबर के दोहे बिहारी से भी भावों में कहीं अधिक बढ़े-चढ़े हैं। मैं इस कविता-कानन के मधुकर की काव्य-कुशलता पर उन्हें हार्दिक बधाई देती हूँ।

(१२) पंजाब के सर्वश्रेष्ठ लेखक श्रीयुत संतरामजी बी० ए०—मित्र, आपने तो सचमुच कमाल कर दिया। मैं नहीं समझता था, आप ऐसे अच्छे दोहे लिख सकते हैं। मैं न तो कवि हूँ, और न काव्य-मर्मज्ञ, केवल मनोरंजन के लिये कभी-कभी कविता का रसास्वादन कर लिया करता हूँ। आपकी दोहावली पढ़कर मुझे बड़ा ही आनंद आया। कोई-कोई दोहा तो इतना अच्छा है कि पढ़ते ही अनायास 'वाह-वाह' निकल पड़ती है। पुराने कवियों के दोहों में जो-जो उत्तम गुण माने जाते हैं, वे सब आपके दोहों में मिलते हैं। अब यह कहना कठिन है कि केवल प्राचीन कवि ही अच्छे दोहे लिख गए हैं, नवीन कवि वैसे नहीं लिख सकते। मेरी स्त्री ने भी आपकी दोहावली को बहुत पसंद किया है।

(१३) प्रोफ़ेसर दीनदयाल गुप्त एम्० ए०, एल्-एल्० बी० (हिंदी-अध्यापक लखनऊ-विश्वविद्यालय)—उक्ति-वैचित्र्य, व्यंग्य और कल्पना की उड़ान में अनेक दोहे यथार्थ में बिहारी के दोहों से बहस करते हैं। उनमें यथेष्ट माधुर्य है। उत्प्रेक्षा, रूपक, श्लेष, यमक, अनुप्रास आदि चमत्कार-पूर्ण सूक्तियों की छटा तो समस्त ग्रंथ में देखने को मिलती है।......कलात्मकता और दिल को ख़ुश करने की 'ख़्यालबाज़ी' में दोहावली का कवि कहीं-कहीं उर्दू के रँगीले

शायरों से भी बाज़ी मार रहा है। रसीले भावों के शब्द-चित्रों को देख तबियत फड़क उठती है, और दिल 'वाह-वाह !' कहकर कवि के मन-उदधि से उड़ी हुई 'भाव-भाप' में भीग जाता है। इस सराहनीय कृति के लिये श्रीदुलारेलालजी को बधाई है। आशा है, हिंदी-काव्य-मर्मज्ञ 'दोहावली' के भावों को समझकर उसका उचित आदर करेंगे।

(१४) ओयल-नरेश श्रीमान् युवराजदत्तसिंह—श्रीपं० दुलारेलालजी की अनुपम तथा सर्वश्रेष्ठ रचना 'दुलारे-दोहावली' को पढ़कर मुझे पहले तो विश्वास नहीं आया कि आधुनिक कवि भी ब्रजभाषा की ऐसी रचनाएँ कर सकते हैं। यह ब्रजभाषा की अत्यंत सुंदर रचना है। इतने मधुर भाव तथा ऐसे अच्छे अनुप्रास तो कदाचित् ही कहीं और मिलें।

(१५) प्रसिद्ध उपन्यास और कहानी-लेखक पं० विश्वंभर-नाथ शर्मा 'कौशिक'—बिहारी के पश्चात् ब्रजभाषा में दोहे लिखने का यह आपका प्रयत्न बहुत सफल रहा। वैसे तो सभी दोहों में कुछ-न-कुछ अनोखापन है, परंतु कुछ दोहे तो वास्तव में बिहारी से भी बाज़ी मार ले गए हैं।

(१६) प्रोफ़ेसर अयोध्यानाथजी शर्मा एम्० ए० (हिंदी)—आपको इस युग का बिहारी कहना चाहिए। कहीं-कहीं पर तो आपके दोहे बिहारी के कुछ दोहों से भी श्रेष्ठ हो जाते हैं।

(१७) विद्वद्वर प्रोफ़ेसर विद्याभास्करजी शुक्ल एम्० एस्-सी०, साहित्यरत्न, वनस्पति-विज्ञान-अध्यापक, नागपुर-विश्वविद्यालय—दुलारे-दोहावली को आद्योपांत पढ़कर मैं यही कहूँगा कि यह अपने ढंग की एक अनोखी रचना है। दोहों की रोचकता, उनके चुभते हुए भाव और उनका सुंदर शब्द-विन्यास, उनकी पद-योजना तथा उनका प्रवाह देखकर तो कोई भी यह कह

उठेगा कि ये दोहे बिहारीजी के दोहों से कहीं अच्छे हैं, परंतु सबसे अनोखी बात जो मुझे इस रोचक रचना में पसंद आई, वह यह थी कि इसमें कितने दोहे ऐसे हैं, जिनमें उच्च कोटि के विज्ञान की झलक है। ये साइंटिफ़िक दोहे लेखक की विज्ञान की योग्यता पर झलक डालते हैं। मुझे तो आश्चर्य है कि इतनी थोड़ी अवस्था में ही एक श्रीदुलारेलालजी में कितनी बातें हैं! उच्च कोटि के संपादक, लेखक, गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, गंगा फ़ाइनआर्ट-प्रेस आदि के एकमात्र संचालक होते हुए भी एक धुरंधर कवि और उस पर भी विज्ञान की ऐसी योग्यता! मुझे तो इस रूप में साइंटिफ़िक रचनाएँ पहली ही बार हिंदी-संसार में दिखाई दी हैं। मैंने आपके कुछ अप्रकाशित दोहे भी सुने हैं, और कितनों में ही विज्ञान के विविध उच्च कोटि के विषयों का सार पाया है।

(१८) हिंदी के सुप्रसिद्ध समालोचक, विद्वद्वर डॉक्टर हेमचंद्र जोशी—आपकी दोहावली चमत्कार-पूर्ण है। इस समय, जब कि हिंदी-साहित्य के ऊपर रहस्य या छायावाद के घनघमंड बादल अपने अनर्थकारी अंधकार की छाया फैलाकर कविता-प्रसाद और रसवती वाक्यावली को लोप करने का सतत प्रयत्न कर रहे हैं, आपकी ब्रजभाषा की ललित, कांत पदावली रस की धार बहाने में समर्थ हुई है। यह देखकर मुझे हर्ष हुआ कि इस विषय पर हिंदी के साहित्यज्ञ एकमत हैं।

(१९) विद्वद्वर प्रोफ़ेसर गोपालस्वरूप भार्गव एम्० एस्-सी०—आपके अनेक दोहे, प्रायः वे सभी, जिनमें आपने वैज्ञानिक उपमाएँ दी हैं, और कुछ अन्य भी, ऐसे हैं कि बिहारी और मतिराम को मात करते हैं।

लै सबको उर-रंग, सोखत, लौटावत नहीं ;
कपटी, कान्ह, त्रिभंग, कारे तुम तातें भए ।

यह सोरठा वही लिख सकता है, जो प्रकाश-विज्ञान का मर्मज्ञ हो। इससे आगे का दोहा भी इसी प्रकार का है। नं० ६६ के दोहे में जो हीरे के गुणों की ओर इशारा किया है, वह भी साधारण साहित्य-कवि के लिये कठिन है। भूकंप और ज्वालामुखी का संबंध भी नं० ८८ के दोहे में बड़ी चतुराई से बताया है।

नं० ८६ में रहट की, ८५ में कुरंड की, १०१ में ज्वार-भाटे की, ११८ में शून्य की, बिजली-घर (Electric Power House) की १२० में, annealing की १२४ में, २६ में चकमक और ईस्पात की, ३४ में वायुयान की, ६७ में अंधबिंदु की, हीरे की ६८ में, आतिशी काँच की ८२ में जो उपमाएँ दी गई हैं, वे आपका वैज्ञानिक अनुभव पूर्णतया बतला रही हैं।

शृंगार-रस के दोहों में भी आपने अद्वितीय प्रतिभा दिखाई है। देश-प्रेम, देशोद्धार, समाज-सुधार, राजनीति, वेदांत, भक्ति, वीर आदि रस तथा समकालीन इतिहास (Contemporary History) पर भी आपने अनुपम दोहे लिखे हैं।

(२०) इंदौर में व्रजभाषा के सबसे बड़े ज्ञाता प्रोफ़ेसर श्रीनिवासजी चतुर्वेदी एम्० ए० (संस्कृत-हिंदी-अध्यापक होलकर-कॉलेज, इंदौर)—आपने हिंदी-भाषा की जो सामयिक और वास्तविक सेवाएँ की हैं, वे सर्वथा अभिनंदनीय एवं सराहनीय हैं। गंगा-पुस्तकमाला तथा माधुरी व सुधा प्रचलित करके हिंदी-क्षेत्र में साहित्य-सेवियों, उत्तम रचनाओं, सुलेखकों को उत्तेजन देने का जो महत्त्व-पूर्ण एवं आदर्श कार्य किया है, वह हिंदी-प्रेमियों के लिये गौरव एवं आदर का विषय है। भाषा में साहित्यिक क्षेत्र निर्माण करने का सुयश आपको अवश्य प्राप्त हुआ है, वह

होना ही चाहिए था। आपकी ये अमूल्य सेवाएँ भाषा के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य हैं।

'दुलारे-दोहावली' तैयार करके आपने आदर्श कवित्व-कला-मर्मज्ञता तथा भाव-मरसता का पूर्ण परिचय दिया है।

इस युग में भी व्रजभाषा की इतनी सुंदर और उत्कृष्ट रचना हो सकती है, यह देखकर मुझे परम प्रसन्नता होती है। निश्चय ही आपकी यह रचना व्रजभाषा-काव्य का गौरव बढ़ानेवाली है। इसमें प्रायः सभी रसों का सुंदर समावेश किया गया है। लालित्य तथा प्रसाद-गुण प्रत्यक्ष प्रकट होते हैं। भावों की धारा नैसर्गिक रूप में प्रवाहित हो रही है। दोहा-सदृश छोटे-से छंद में गंभीर भावों का सुरुचि-पूर्ण दिग्दर्शन कराना कवि की प्रतिभा का प्रत्यक्ष प्रमाण है। कल्पनाएँ स्थान-स्थान पर अत्युत्तम तथा मनोमोहक हैं। इस उत्तम काव्य का अवलोकन करके बिहारी तथा सत्यनारायण की पुनीत स्मृति सहसा उपस्थित हो जाती है। भाषा पर आपका आधिपत्य देखकर परम हर्ष होता है।

३. हिंदी-कवियों की राय

(१) सबसे वृद्ध काव्य-मर्मज्ञ, छंद-शास्त्र के अद्वितीय विद्वान्, कविश्रेष्ठ पं० जगन्नाथप्रसादजी 'भानु' लिखते हैं—

"कवि-सम्राट् श्रीदुलारेलाल भार्गव

सुहृद्वर,

'दुलारे-दोहावली' की प्रति मिली। अनेक धन्यवाद। पुस्तक पढ़कर चित्त अत्यंत प्रसन्न हो गया। इसके पहले भी मैं माधुरी या सुधा में प्रकाशित चित्रों के नीचे छपे आपके बनाए हुए दोहों को पढ़कर आपकी प्रशंसा किया करता था, और मित्रों से कहा करता था कि इन भाव-पूर्ण दोहों को पढ़कर बिहारी कवि का स्मरण हो

आता है। सचमुच में जैसे वह कोमल पर मार्मिक, ललित पर अनूठे, सरस और सजीव दोहों के लिखने में समर्थ और सिद्ध-हस्त थे, जान पड़ता है, वे ही सब बातें माता सरस्वती ने आपकी लेखनी में भी भर दी हैं। ब्रजभाषा के वर्तमान काल के कवियों में ......सर्वश्रेष्ठ कवि मानता हूँ।

आपने यह बहुत अच्छा किया, जो इन सब दोहों को क्रमबद्ध करके उनका संग्रह, सचित्र और सजावट के साथ, प्रकाशित कर डाला। यह अब हिंदी-साहित्य की बहुमूल्य चीज़ हो गया है।"

(२) महाकवि शंकरजी—महाकवि पं० नाथूरामशंकरजी शर्मा ने, सन् १९२२ में, माधुरी में प्रकाशित दुलारे-दोहावली के प्रारंभिक और अपेक्षाकृत साधारण दोहों पर ही मुग्ध होकर बिना जाने ही कि ये श्रीदुलारेलाल के लिखे हैं, उन्हें लिखा था—"माधुरी बड़े ठाट-बाट से निकली है। परमात्मा उसे उत्तरोत्तर उन्नति के उच्च शिखर पर चढ़ावे।......दोहा लाजवाब निकला है। दोहा के प्रणेता की सेवा में मेरा प्रणाम पहुँचे।......कविता है, तो यह है!"

नोट—सुप्रसिद्ध काव्य-मर्मज्ञ, संपादक-प्रवर, कविवर पं० हरिशंकर शर्मा का कथन यह है कि पूज्य पिताजी शंकरजी महाराज दुलारे-दोहावली के दोहों की सदा प्रशंसा करते रहते थे, और 'माधुरी' में प्रकाशित कुछ दोहों पर उन्होंने "बहुत ख़ूब" लिख रक्खा था!

(३) महाकवि श्रीमैथिलीशरणजी गुप्त—आज लोग भले ही उन पर टीका-टिप्पणी करें, परंतु हिंदी-काव्य के दोहा-साहित्य के इतिहास में प्राचीनों के साथ उनका भी एक विशेष स्थान होगा ही। एक मित्र के नाते उसके लिये मैं उन्हें सहर्ष बधाई देता हूँ।

(४) महाकवि श्रीसियारामशरणजी गुप्त—मुझे तो आपके

दोहे बहुत पसंद हैं। आपने ब्रजभाषा की महादेवी के कंठ में दोहा-वली का जो यह आभूषण पहनाया है, उसका सोना तो प्राचीन है, अतएव उसे खरा मानना ही पड़ेगा; किंतु उसमें निर्माण-रुचि की नवीनता भी यथेष्ट परिमाण में है। इस संबंध में आपको अपूर्व सफलता मिली है।

(५) छायावाद के श्रेष्ठ महाकवि पं० सुमित्रानंदनजी पंत—प्रायः प्रत्येक दोहा आपने मौलिक प्रतिभा, कोमल पद-विन्यास एवं काव्योचित भाव-विलास से सजाया है। शृंगार तथा प्रकृति-प्रधान दोहे मुझे अधिक पसंद हैं। तुलनात्मक दृष्टि से मध्यकालीन महारथियों की रचनाओं से वे होड़ लगाते हैं।

(६) हिंदी-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ इतिहासकार, सुप्रसिद्ध समालोचक, विद्वद्वर रायबहादुर पं० शुकदेवविहारी मिश्र बी० ए०—पं० सुमित्रानंदनजी पंत ने दुलारे-दोहावली के संबंध में जो कुछ लिखा है, उससे मैं अक्षरशः सहमत हूँ।

(७) कवि-सम्राट् पं० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय 'हरिऔध'—

काके दृग बिलसे नहीं लहे सु-मुकता-हार,
देखि दुलारेलाल - कृत दोहावली - दुलार ?
बनी सरस दोहावली, बरसि सुधा-रस-धार,
कौन दुलारेलाल के दिल कौ लहै दुलार ?

(८) कविवर प्रोफ़ेसर रामदास गौड़ एम्० ए०—२०० दोहों तक आँखें पहुँच गईं। बढ़े चलिए। ७०० पूरे कीजिए। बड़े बाँके दोहे हैं। राजनीतिक दोहे महत्त्व के हैं। रचनाकाल के अंतःसाक्षी भी हैं। मुझे तो आपके कई अनुपम दोहे बिहारी से भी चोखे लगते हैं। आजकल के विषयों का समावेश करके आपने इन्हें समयानुकूल बना दिया है। रत्नाकरजी ऐसा नहीं कर सके।

(६) सरस्वती-संपादक विद्वद्वर पं० देवीदत्तजी शुक्ल—मैं ब्रजभाषा नहीं जानता, तो भी इसे पढ़ गया। कई दोहे बहुत सुंदर जान पड़े। १५, २७, २८, ३३, ३६, ५२, ६१, ६२, ७६, ७७, ८३ नंबर के दोहे मुझे अधिक पसंद आए। यदि आपके दोहे खड़ी बोली में होते, तो उनसे राष्ट्र-भाषा का निस्संदेह गौरव बढ़ता, तथापि सफल कविता-रचना के लिये आपको बधाई है।

(१०) सरस्वती-संपादक कविवर ठाकुर श्रीनाथसिंहजी—आपका 'तन-बाग़' दोहा बिहारी के दोहों से बाज़ी मार ले गया है! थोड़े शब्दों में बड़ी बात व्यक्त करने के लिये बिहारी प्रसिद्ध हैं। पर, जान पड़ता है, आप उनकी इस प्रसिद्धि पर चोट करेंगे।... मैं दोहों का विरोधी था..., पर आपके दोहों ने इस दिशा में भी मेरी रुचि उत्पन्न कर दी है।...मैं सप्रमाण सिद्ध कर सकता हूँ कि आपकी दोहावली बिहारी-सतसई से बाज़ी मार ले गई है।

(११) कविश्रेष्ठ हितैषीजी—आपने दोहे लिखकर वह कमाल दिखलाया कि मैं आश्चर्य-चकित रह गया। मैं स्पष्ट कहने में संकोच न करूँगा कि आपने बिहारी से लेकर अब तक के प्रायः सभी कवियों को पीछे छोड़ दिया। आचार्य द्विवेदीजी के सम्मान के हेतु हुए प्रयाग के द्विवेदी-मेला में राजा साहब कालाकाँकर के और मेरे अनुरोध पर तुरंत रचना करके तो आपने मुझे मुग्ध ही कर लिया था। तब मैंने ही नहीं, वरन् उपस्थित सहस्रों नर-नारियों ने मुक्त कंठ से आपकी अपूर्व कवित्व-शक्ति की प्रशंसा की थी। आपकी यह दोहावली वर्तमान काल में ब्रजभाषा की अद्वितीय वस्तु है।

(१२) आचार्य रामकुमार वर्मा एम्० ए०, हिंदी-विभाग, इलाहाबाद-युनिवर्सिटी—मुझे यह कहने में कुछ भी संकोच नहीं

है कि दोहावली में कल्पना और अनुभूति का जितना सजीव चित्रण हुआ है, उतना आधुनिक व्रजभाषा के किसी भी ग्रंथ में नहीं। यह आधुनिक व्रजभाषा में सर्वोत्कृष्ट रचना है। विशेषता तो यह है कि इस दोहावली में व्रजभाषा ने नवीन युग की भावना उतने ही सौंदर्य से प्रदर्शित की है, जितने सौंदर्य से राधाकृष्ण के शृंगार की भावना। इसमें संदेह नहीं कि आपकी यह कृति अमर रहेगी।......व्रजभाषा में लिखनेवाले आधुनिक कवियों के लिये दुलारे-दोहावली आदर्श रचना होगी।

(१३) कविवर श्रीयुत गुरुभक्तसिंहजी 'भक्त' बी० ए०, एल्-एल्० बी०—खड़ी बोली के इस युग में व्रजभाषा में कविता लिखकर आपने व्रजभाषा के स्वर्णयुग के कवियों से सफलता-पूर्वक टक्कर ली है। आपके दोहे पद-लालित्य, अर्थ-गौरव, शब्द-सौष्ठव एवं माधुर्य में कहीं तो महाकवि बिहारीलाल के समकक्ष और कहीं बढ़कर ठहरते हैं। इस दोहावली को देखकर क्या अब भी कोई कह सकता है कि व्रजभाषा Dead Language हो चली है।

सहज बिमल सित किरण-सी पदावली प्रतिएक—
बुध-बिचार-घन लहत ही प्रगटत रंग अनेक।
कण - से लघु यद्यपि लगैं दोहे सरस अखंड,
विश्लेषण के होत ही प्रगटे शक्ति प्रचंड।

(१४) कविवर 'बिस्मिल' इलाहाबादी—

बिहारी-सतसई से कुछ नहीं कम—
दुलारेलाल की दोहावली भी।

(१५) कविराज पं० गयाप्रसाद शास्त्री राजवैद्य, साहित्याचार्य, आयुर्वेद-वाचस्पति, भिषग्मल 'श्रीहरि'—

ऊख मैं, पियूख मैं न पाई सुर - रूखहू मैं,
दाख की न साख त्यों सिनाहू सकुचाई है;
सीठी भई मीठी बर अधर-सुधा हू जहाँ,
मंद परी कंद की अमंद मधुराई है।
पीते रहे ही ते, पर रीते अनरीते रहे,
जानि न परै धौं यह कौन-सी मिठाई है;
'श्रीहरि' अनोखी, चोखी, उक्ति-जुक्ति-भाव-भरी,
कोई कल कामिनी कि कबि-कबिताई है।

(१६) ब्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि श्रीश्यामनाथजी 'द्विज-श्याम'—

सुधुनि, सुलच्छन, गुन-भरे, भूषन-धरे, रसाल,
शत दोहा रचि सत सुयश लह्यो दुलारेलाल।

(१७) ब्रजभाषा के कविवर पं० उमाशंकर वाजपेयी 'उमेश' एम्० ए०—I am extremely delighted with its freshness, strength, originality and in my opinion it is a work of permanent interest, wonderful power and marked genius. You have originated a new style of your own in Brija Bhasha and I consider you to be the Poet of the foremost rank.

(१८) कविवर श्रीलक्ष्मीशंकर मिश्र 'अरुण' बी० ए०—आधुनिक ब्रजभाषा की पुस्तकों में इस दोहावली का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। सभी दोहे सुंदर और सुललित हैं। विषय-निर्वाह, पद-योजना, ध्वनि और अलंकार के लक्षणों से युक्त इस रचना का हिंदी-संसार यथेष्ट आदर करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। आपकी भाषा में सरसता है,

प्रवाह है, और एक अनूठापन है, जो प्राचीन कवियों की रचनाओं में भी पूर्ण रूप से नहीं मिलता। बिहारी और मतिराम के दोहों से भी आपके कुछ दोहे, भाव और सरसता की दृष्टि से, बहुत बढ़ गए हैं। चमत्कार और मौलिकता आपकी रचनाओं का प्रधान गुण है! आशा है, आपकी दोहावली ब्रजभाषा-साहित्य के भांडार का एक अति उज्ज्वल रत्न बनेगी।

(१६) ब्रजभाषा के कविश्रेष्ठ पं० शिवरत्नजी शुक्ल 'सिरस'—रूपकालंकारादि से दोहे पूर्ण हैं। आपने बिहारी के साथ कविता की समानांतर रेखा खींची है। संकुचित स्थानों में, जहाँ कहीं आप बिहारी से मिलते देख पड़ते हैं, वहाँ भी आपने भिन्न भावांकन के साथ पृथक् ही रहने का अच्छा प्रयास किया है। आपके दोहों में भाव बढ़िया हैं, और वे अनुप्रास तथा यमक से जगमगा रहे हैं। दोहा की सकरी गली में साधारणतः सिकुड़कर चलना पड़ता है, पर वहाँ भी आपने कविता को भूषित वेश में निकाला है।

(२०) कविवर पं० हरिशंकरजी शर्मा—कितने ही दोहे तो बड़े ग़ज़ब के हैं। उनमें चमत्कार-पूर्ण प्रतिभा और कवित्वमय मौलिकता है। खड़ी बोली के आधुनिक युग में, ब्रजभाषा की ऐसी रुचिर रचना, वास्तव में, अभिनंदनीय है। दृढ़ विश्वास है कि विश्व-विश्रुत ब्रजमाधुरी आपका, इस सुधास्यंदिनी कोमल-कांत पदावली के लिये, अपना अमोघ आशीर्वाद प्रदान करेगी।

४. अँगरेज़ी-विद्वानों की राय

(१) विद्वद्वर प्रोफ़ेसर जीवनशंकरजी याज्ञिक एम्० ए०, एल्-एल्० बी०, अँगरेज़ी-अध्यापक काशी-विश्वविद्यालय—'दुलारे-दोहावली' एक अनोखी चीज़ है। कोई माई का लाल ब्रज-भाषा की क्षीण और उपेक्षित शक्ति को फिर से चमका देगा, ऐसी

आशा नहीं रह गई थी। श्रीभार्गवजी छिपे रुस्तम निकले। सफल संपादक से बढ़कर कवि निकले। और, वह भी कैसे कि उनकी तुलना बिहारी से की जाती है! धन्य उनका सफल प्रयास और धन्य उनकी अमर कृति!!

भविष्य में इस युग का नाम 'दोहावली' से निश्चित हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। इस अनमोल हार को पाकर आज मातृभाषा गौरव को प्राप्त हो रही है।

'दोहावली' की चर्चा करते हुए हमें तो गीता का श्लोक याद आता है—

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-
माश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः ;
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति
श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्।

इससे अधिक क्या कहा जाय, और जो कुछ भी कहा जाय, वह ऐसे रत्न की प्रशंसा में अत्युक्ति-दोष से दूषित नहीं हो सकता। बड़े सौभाग्य से अपने जीवन में ऐसी रत्नावली देखने को मिलती है।

(२) प्रोफ़ेसर अमरनाथ झा (प्रयाग-विश्वविद्यालय में अँगरेज़ी-विभाग के अध्यक्ष)—'दोहावली' पढ़कर चित्त बहुत प्रसन्न हुआ। बहुत दिनों पर ऐसी कविता पढ़ने का अवसर मिला। बिहारी ने दोहा को ऐसे उच्च शिखर पर पहुँचा दिया था कि कवियों को उनका अनुकरण दुःसाध्य मालूम होने लगा था। आपने 'दोहावली' लिखकर यह प्रमाणित कर दिया कि इस युग में भी, व्रजभाषा में, सभी प्रकार के भाव, सभी भाँति के विषय, गूढ़-से-गूढ़ तत्त्व, जटिल-से-जटिल समस्याएँ दोहा में सुचारु रूप से व्यक्त करने की योग्यता आपमें है।

पुस्तक जिस विलक्षण सजधज से निकली है, उसी ठाट की कविता भी है।

(३) हिंदी के श्रेष्ठ कवि और आलोचक प्रोफ़ेसर शिवाधारजी पांडेय (अँगरेज़ी-अध्यापक प्रयाग-विश्वविद्यालय)—
'What I came across, however, was equal to anything of the type in our literature.

५. पत्र-पत्रिकाओं की राय

(१) हिंदी का सबसे अधिक उपकार करनेवाली संस्था दक्षिण-भारत-हिंदी-प्रचार-सभा का मुख-पत्र 'हिंदी-प्रचारक'—
यह पुस्तक इस बात का प्रमाण है कि खड़ी बोली के इस युग में भी ब्रजभाषा का महत्व कम नहीं हुआ है। भाषा, भाव तथा कल्पना, सब दृष्टियों से इसके दोहे सर्वोत्कृष्ट कहे जा सकते हैं। कुछ दोहे तो ऐसे उतरे हैं कि उन्हें पढ़-पढ़कर भी जी नहीं भरता और फिर पढ़ने की इच्छा होती है। कई दोहे तुलना में कवि बिहारीलाल के दोहों की टक्कर के हैं, इसमें ज़रा भी संदेह नहीं।

(२) हिंदी की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'चाँद'—दोहावली के दोहे निस्संदेह बहुत अच्छे हैं। उनमें पद-लालित्य, अर्थ-चमत्कार, सूक्ष्म कल्पना, भाव-गंभीरता, रस और अलंकार, सभी कुछ मिलता है। इन दोहों की रचना करके कविवर श्रीदुलारेलालजी ने अपनी प्रखर एवं असाधारण कवित्व-प्रतिभा का परिचय दिया है। 'दुलारे-दोहावली' के पढ़ने में प्रायः वही आनंद मिलता है, जो 'बिहारी-सतसई' के पाठकों को प्राप्त होता है। 'दोहावली' एक मुक्तक काव्य है। बहुत-से दोहे शृंगार-रस-पूर्ण होते हुए भी अश्लीलता के दोष से सर्वथा मुक्त हैं। शृंगारात्मक दोहों के अतिरिक्त, प्रस्तुत

काव्य-ग्रंथ में. धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय विषयों के आधार पर रचे हुए कुछ दोहे भी वर्तमान है।

इस प्रकार के उत्कृष्ट दोहे पुस्तक में भर पड़े हैं। रूपक-अलंकार का आश्रय लेकर कवि ने विविध विषयों का वर्णन बड़े चित्ताकर्षक ढंग से किया है। ब्रजभाषा का अवलंबन कर आधुनिक काल में इस प्रकार की सरलता एवं ललित रचना करके कविवर श्रीदुलारेलालजी ने वास्तव में बड़े कमाल का काम किया है।